RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-05
Issue-06
June-2020

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]
DOI:https://doi.org/10.31305/rrijm.2020.v05.i06.009

पंचायती राज एवं पर्यावरण संरक्षण– एक अध्ययन

डॉ. फूलसिंह गुर्जर

सह–आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झालावाड़ (राज0)

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 15June 2020

Keywords
पंचायती राज, पारिस्थितिकी, पर्यावरण, जैविक, अजैविक, ग्लोबल वॉर्मिंग, परावलम्बन, सतत विकास, थानक, बोधि वृक्ष, फड़ कला, कापड़ कला, पाठों कला, संज्या, ओरण, सब भूमि गोपाल की, गो ग्रीन, 3r, रिसाइकल, रीड्यूस और री–यूज

***Corresponding Author**
Email: psg22965[at]gmail.com

ABSTRACT

पर्यावरण असंतुलन मानव, प्रकृति और जीव जन्तु के लिए ही खतरा नहीं अपितु मानवीय व सामाजिक वातावरण के लिए भी खतरा बना हुआ है। प्रारम्भ में मानव व पारिस्थितिकी अन्तर्सम्बन्ध सन्तुलित थे, जैसे जैसे जनसंख्या वृद्धि, अन्धाधुन्ध वनों की कटाई वन जीवों का शिकार, तकनीकी ज्ञान का विकास एवं प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन से पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हो गई है। विकास को स्वतंत्रता, समानता और लोकतंत्र की अनिवार्य शर्त मानने वाले राजनेता और विद्वान यह भूल गये है कि अनियंत्रित विकास हमे विपदा की ओर ले जाता है। विकास को समुचित व समन्वयकारी बनाने के लिए पंचायत राज संस्थाओं को अधिक मजबूत और लोकतांत्रिक बनाने की आवश्यकता है। पर्यावरण संकट की समस्या विश्व व्यापी होने के कारण राज्य, सरकार या पंचायतों की ही जिम्मेदारी नहीं है बल्कि प्रत्येक नागरिक को अपनी जीवन शैली को बदलने, सचेत व जागरूक एवं पर्यावरण संरक्षण के अनुरूप करनी होगी। इन सब बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए इस लेख में पर्यावरण संरक्षण में पंचायत राज संस्थाओं की भूमिका का एक अध्ययन किया गया है।

वर्तमान विश्व की सबसे चर्चित एवं प्रमुख समस्या 'पर्यावरण असन्तुलन' है। पर्यावरण अवनयन के लिए मानव और प्रकृति के मध्य असन्तुलित सम्बन्ध उत्तरदायी है। जब तक मानव और प्रकृति के सम्बन्ध आत्मीय, मैत्रीपूर्ण और सहयोगात्मक रहे तब तक पर्यावरण के तत्व हमारी छोटी–मोटी भूलों को सहन करते रहे है। लेकिन जब भौतिक स्वार्थ की पूर्ति के लिए पर्यावरण पर लगातार चोट पहुँचाई गई तो उसकी गुणवत्ता घटने लगी। आधुनिक भोग विलास के चलते हमने पर्यावरण अवमानना की आदत सी बना ली है। हम प्रकृति विजय का स्वप्न देखते–देखते भूल गये कि मनुष्य भी प्रकृति पुत्र है, उसकी जिन्दगी का आधार भी यह नैसर्गिक वस्तुएँ है जिसकी गुणवत्ता, देखभाल करना हमारा परम कर्तव्य है।

जीवधारियों एवं वनस्पतियों के चारों ओर के आवरण को पर्यावरण कहते है जिसकी उत्पत्ति अंग्रेजी शब्द एनवायरमेन्ट से हुई है जो जैविक और अजैविक का सम्मिश्रण है।[1]पर्यावरण में वनस्पति प्राणी और मानव सहित सजीवों और उनके साथ सम्बन्धित पूर्ण विश्व का परिसर सम्मिलित है। अतः पर्यावरण में वायु जल, भूमि पेड़ पौधे जीव जन्तु मानव और उसकी विविध गतिविधियों के परिणाम आदि सभी का समावेश होता है। पर्यावरण के विभिन्न प्रकार प्राकृतिक, मानव निर्मित, और सामाजिक है। प्राकृतिक जैविक पर्यावरण में सूक्ष्म जीव जन्तु शामिल है वहीं अजैविक में ऊर्जाउत्सर्जन तापमान ऊष्मा प्रवाह, जल अग्नि मृदा वायुमंडलीय गैसें शामिल है। मानवीयकृत पर्यावरण में कृषि, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण तथा जनसंख्या वृद्धि आदि तथा सामाजिक पर्यावरण में धरती पर भाषायी, धार्मिक रीति–रिवाज शामिल है। औद्योगिक हेतु मानव ने प्रकृति की सौम्यता, सदाशयता और सुन्दरता के साथ खिलवाड़ किया है, प्रकृति से मानव की सारी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है लेकिन उसकी भोग्यत्व–भावना चौर्यवृत्ति और तृष्णा की तुष्टि कदापि नहीं। महात्मा गाँधी की दृष्टि में यह धरती अपने प्रत्येक निवासी की आवश्यकता को पूर्ण करने के लिए यथेष्ट साधन उपलब्ध करती है, लेकिन हर व्यक्ति के लालच की पूर्ति नहीं कर सकती है।

पर्यावरण को खतरा– मानव की असीमित लालसा, जिसकी पूर्ति के लिए औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, उपभोक्तावादी संस्कृति जिम्मेदार है। व्यक्ति की वस्तुओं को पाने की इच्छा, अनावश्यक वस्तुओं का उत्पादन तथा जंगल[2], पानी, पेट्रोल का बेहताशा दोहन से जहरीली, गैसे, जैसे धुआं, गंदा पानी, रासायनिक व्यर्थ पदार्थ, फैक्ट्रियों, बड़े बड़े कारखानों से अधिक मात्रा में निकलते है, इसलिए इन उत्पादों में प्राकृतिक संसाधनों के विनाश के साथ प्रकृति भी प्रदूषित हो जाती है।[2]अन्ध प्रौद्योगिकी का प्रयोग भस्मासूर तथा उपभोक्ता संस्कृति का वरण करना हमारे कल के राक्षस है। वनों की कटाई और रासायनिक खेती तथा जहरीली कीटनाशक दवाओं का प्रयोग इसी गति से चलता रहा तो निकट भविष्य में पृथ्वी की एक तिहाई जमीन अनुर्वर एवं बांझ बन जायेगी और जलवायु में असीमित विध्वंसकारीपरिवर्तन हो जाऐगें। जिससे समुद्र में पानी के तल की वृद्धि होगी तथा समुद्र किनारे स्थित नगर पानी में डूब जायेगें। प्रकृति और प्राणी में अहि–नकुल का सम्बन्ध नहीं बल्कि माता और पुत्र का सम्बन्ध होना चाहिये। वेद में कितना सुन्दर कहा गया है– 'माता भूमि पुत्रोंअहं।' भूमि हमारी माता है, हम उसकी संतान है।[3]धरती किसी की निजी सम्पत्ति नहीं है और न हमें अपने पूर्वजों से

RRIJM 2015, All Rights Reserved

उत्तराधिकार में मिली है बल्कि यह हमारे पास भावी पीढ़ियों की धरोहर है, इसलिए हम सबका परम कर्तव्य बनता है कि इस भावी पीढ़ियों की धरोहर को सजाये–सवारे तथा हमारे आस–पास के वातावरण को संरक्षित सुरक्षित तथा उसे जीने योग्य बनाये। आज पर्यावरण संरक्षण क्यों आवश्यक है? क्योंकि हमने पृथ्वी का बेहताशा दोहन, खनन, गन्दा किया है। हमारे शरीर में कैंसर टी.बी. अस्थमा जैसी बीमारियाँ पैदा हो रही है। यही हालात रहे तो एक दिन पृथ्वी/वनस्पति प्रदूषण में सम्माहित हो जाएगी। मनुष्य का प्राकृतिक वातावरण के साथ सहसम्बन्ध परावलम्बन का होना चाहिए न कि विनाशात्मक। पर्यावरण संरक्षण और विकासात्मक दृष्टिकोण को लेकर राज्य, सरकार, संयुक्त राष्ट्र संघ, स्वयंसेवी संस्थाओं तथा विद्वानों, लेखकों एवं पर्यावरण प्रेमियों ने गहरी चिन्ता व्यक्त की है। जिसमें राचेलकारसन की Silent Spring (1960)पाल ऐरालिचकी The Population Bomb (1968), संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट Only of Earth Report,अग्रवाल, एस. के ग्लोबलवार्मिंग (2008) गॉडिनरॉबर्ट ई, ग्रीन पॉलिटिकल थियरी (1992), सुनीता नारायण, पर्यावरण की राजनीति (2012) मनोज चतुर्वेदी भारतीय संस्कृति और महात्मा गाँधी (2019) सुन्दरलाल बहुगुणा, धरती की पुकार 2007, महात्मा गाँधी, हिन्द स्वराज (1909)। इन सभी विद्वानों और पर्यावरण प्रेमियों ने अपने अपने दृष्टिकोण, तरीके और माध्यम से मानव और सरकारों को सावचेत किया है कि पर्यावरण संरक्षण नहीं किया तो आने वाली पीढ़ियों का भविष्य अन्धकारमय होगा। सन् 1970 के दशक में पश्चिमी देशों ने पर्यावरण बचाओं और हरियाली बचाओं आन्दोलन शुरू किया। सत्तर के दशक के बाद ही सतत् विकास की अवधारणा पर बल दिया जाने लगा। ब्रंटलैड के अनुसार सतत् विकास वो है जो वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की आपूर्ति करते हुए आने वाली पीढ़ियों की भी अपनी आवश्यकताओं की आपूर्ति कर सके।[4]

पर्यावरण के बढ़ते खतरे को नियंत्रित करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ के नेतृत्व में विभिन्न देशों ने पहल करना आरम्भ किया। जिसकी परिणति विभिन्न पर्यावरणीय सम्मेलन के रूप में सामने आई। विश्व में भारत ही एक ऐसा देश रहा है जहाँ पर इस दिशा में आदिकाल से ही चिंता प्रकट की जाती रही है। राजस्थान के गाँवों में 'ओरण' एक प्रकार का आरक्षित वन है। उस पर सामुदायिक संस्थाओं, ग्राम पंचायत तथा मंदिरों के ट्रस्ट आदि का अधिकार होता है। जिसे ग्रामीण क्षेत्रों की पंचायतों की सर्वसुलभ सम्पत्ति या संसाधन भी कहा जा सकता है। जिसका ग्राम्य जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। अनादिकाल से भारत ग्रामीण समुदायों की भूमि रहा है, वर्तमान में भी है एवं भविष्य में भी रहेगा। ग्राम वैदिककालसे ही प्रशासन की मूल इकाई रहा है, ऋग्वेद में ग्रामीणी (ग्राम प्रमुख) का संदर्भ आता है। जिससे स्पष्ट होता है कि प्राचीनकाल से ग्राम प्रधान व्यवस्था रही है। आजादी के बाद भारतीय संविधान के नीति निर्देशक तत्वों में पंचायत राज का उल्लेख किया गया है। 02 अक्टूबर 1959 को राजस्थान के नागौर जिले में देश के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू द्वारा पंचायत राज संस्थाओं का उद्घाटन किया गया था। 73 वें संविधान संशोधन द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा दिया गया है। जिसे राजस्थान में 23 अप्रैल 1994 से लागू किया गया। त्रिस्तरीय पंचायत राज संस्थाओं का चुनाव भी ग्रामीण मतदाताओं द्वारा पाँच वर्ष के लिए किया जाता है। वर्तमान में सभी निर्वाचित संस्थाएँ कार्यरत है। इस व्यवस्था में सामाजिक न्याय के अनुरूप आरक्षण की व्यवस्था भी की गई है।

पंचायती राज एवं पर्यावरण संरक्षण अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यही है कि आज गाँव का सम्पूर्ण ताना बाना, सामाजिक वातावरण, प्राकृतिक स्वरूप तथा मानव–मानव के मध्य प्रेम, सहयोग व अनत्व खत्म हो गया है। लोगों में सामाजिक दूरियाँ बढ़ रही है। आपसी विश्वास व सहयोग की भावना खत्म हो गई है। जल, जमीन, जंगल तथा जीव खत्म हो रहे है। पंचायतें राजनीति का अखाड़ा बन गई है। चारों ओर भ्रष्टाचार, काम को टालने की प्रवृत्ति व्याप्त है। लोगों ने जंगलों पर कब्जा तथा पेड़ों की अन्धाधुन्ध कटाई की है। इन सब मुद्दों पर पंचायत राज संस्थाओं की योजना, क्रियान्विति, बाधाएँ तथा जनहित को आधार बनाकर वैज्ञानिक, अनुभवपरक, पर्यवेक्षात्मक तथा विश्लेषणात्मक पद्धति से अध्ययन एवं निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया है। पंचायतें ग्रामीण विकास की रीढ़ है। इनकी नीतियों की क्रियान्विति, समयबद्ध,[3] पारदर्शितापूर्ण हो। योजनाओं की जानकारी के अभाव में भ्रष्टाचार पनपता है। गाँधीजी ने एक बार हरिजन में लिखा था कि यदि गाँव समाप्त होते है तो भारत भी समाप्त हो जायेगा। यह भारत के रूप में नहीं बचेगा। विश्व में भारत का जीवन लक्ष्य ही गुम हो जायेगा। ग्रामीण विकास का पुनरूद्धार केवल तभी संभव है जब इसका और अधिक शोषण न हो।[5] ग्रामीणों का शोषण न हो, योजनाओं की सही और समय पर जानकारी मिलें। इसके लिए सरकारें विज्ञापन, सोशल मीडिया अखबारों, टेलीविजन तथा संस्थाओं के मुख्य भवन पर सूचनाएँ चस्पां करती है। प्राकृतिक पर्यावरण न बिगड़े इसके लिए केन्द्र ने निःशुल्क गैस, योजना चालू की है, जिससे गृहिणी का स्वास्थ्य एवं ईंधन सुरक्षित रहे। जीव जन्तुओं के लिए पंचायतों के माध्यम से वनरोपण (कूप) जलाशय निर्माण, कुआँ बावड़ियों की सफाई आदि कार्य करवाये जा रहे है। 73 वें संविधान संशोधन के उपरान्त संविधान में ग्याहरवीं अनुसूची जोड़ी गई है जिसमें पंचायतों के अधिकार क्षेत्र में आने वाले 29 विषयों को सम्मिलित किया गया है[6]:– कृषि विस्तार, भूमि सुधार, लघु सिंचाई, पशुपालन, मत्स्यपालन, सामाजिक वनोद्योग, लघु वन, लघु उद्योग, खादी ग्राम व कुटीर उद्योग, ग्रामीण आवास, पेयजल, ईधन व चारा, सड़के, पुल, पुलिया, फेरी जलमार्ग,

ग्रामीण विद्युतीकरण, व गैर पारम्परिक ऊर्जा स्रोत, निर्धनता निवारण, शिक्षा, पुस्तकालय, मेले व बाजार, स्वास्थ्य एवं सफाई, परिवार कल्याण–महिला बाल विकास, समाज कल्याण, सार्वजनिक वितरण और सामुदायिक परिसम्पत्तियों का अनुरक्षण आदि।

प्राचीनकाल से ही हमारी जीवन शैली, सामाजिक रीति–रिवाजों, प्रकृति के अनुरूप है। प्रातः उठते ही हमराम नाम व सूर्यनमस्कार से दिन की शुरूआत करते है। सभी शुभ कार्यों की गणेश अराधना से शुरूआत होती है। हमारे धार्मिक ग्रन्थों में पर्यावरण से सम्बन्धित मंत्र है जो मानव को नियंत्रित व संयमित जीवन जीने की सीख देते है किमानव इच्छाओं को वश में करके प्रकृति से उतना ही ग्रहण करे, जिससे उसकी पूर्णता क्षति न हो। वन, जल और पृथ्वी की रक्षा करना मानवीय धर्म है। मत्स्यपुराण में बताया है कि एक वृक्ष को दस पुत्रों के बराबर माना जाता है।[7]तुलसी का पौधा एक औषधीय न होकर भगवान के भोग का पात्र भी है। कहावत है कि बांस है तो सांस है। नीम का पेड़ लोकदेवता देवनारायण व तेजाजी के थानक पर उगाये जाते है जिसकी पत्तियों से शादी ब्याह जिन्हें 'पाती का ब्याह' कहते है होती है। आम, केला, पीपल के पत्तों का वंदन घर बनाया जाता है। इसके अलावा सुपारी, खजूर, बेल पत्र, आंकड़े के फूल, धतूरे के फूल भी देवी–देवताओं के चढ़ाये जाते है। खेजड़ी को राजस्थान का कल्पतरू कहते है। पेड़ो की रक्षा के सम्बन्ध में राजस्थान में एक कहावत है– 'बामलिया दाग लगे टुकड़े देवों न दान, सिर साटे रूख रहे तो भी सस्तों जाण।' राजस्थान के विश्वनोई समाज की वीरांगनाओं ने पेड़ो (खेजड़ी) के रक्षार्थ अमृतादेवी ने पेड़ के लिपट कर जान गंवाई थी। पीपल एक रोग रहित तथा पर्यावरण सन्तुलन का सर्वश्रेष्ठ वृक्ष है जो एक घण्टे में 1722 किलो ऑक्सीजन देता है और 2252 किलो अशुद्ध हवा कार्बनडाई ऑक्साइड पचाता है इसलिए यह पूजनीय भी है। पीपल की पूजा से कामना सिद्धि मिलती है। बोधि वृक्ष इसी का नाम है।[8]

मांगलिक अवसरों पर लीपी–पुती सौंधी धरती पर जो मांडणे मांडे जाते है उसमें सारा पर्यावरण प्रकटिक हुआ मिलता है। इसके साथ फड़ कला, कापड़ कला, पाठोंकला, सायं के समय जब नन्हीं–नन्हीं बालिकाएँ अपने घरों के मुख्य द्वारों पर संज्या फूलती है[9]तो उनका भाव प्रकृतिमयप्रतीत होता है।

प्राचीनकाल से ही हमारा जीवन, धर्म, सामाजिक वातावरण प्रकृति के अनुरूप है, अब बदलते जीवन मूल्य, उपभोक्तावादी संस्कृति, जनसंख्या वृद्धि, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, तकनीकी विकास, अज्ञानता और प्रकृति के प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार, सरकार की जनकल्याणकारी योजनाओं के लाभ के चलते मानव का दृष्टिकोण पर्यावरण संरक्षण के प्रति बहुत बदल गया है। पश्चिमी जीवन मूल्य, शिक्षा तथा सोच न मानव को प्रकृति से दूर, उपभोग की संस्कृति का संवाहक बना दिया है। पर्यावरण संरक्षण की जो हमारी अवधारणा थी, अब वह बदल रही है। गाँवों में पूरे के पूरे पेड़ तथा वन, खत्म हो गए है। लोगों ने वनों को काट कर खेती के लिए हकाई जुताई कर दी तथा बड़े बड़े कृषि फॉर्म बना लिए है। गाँव का जो सहयोगात्मक वातावरण था वह आपस में बैर–भाव में बदल गया है। शादी–ब्याह मरण मौत में जो सामाजिक वातावरण होता था वो अब देखने को नहीं मिलता है। सरकार की योजना सन् 2022 तक एक भी कच्चा मकान भारत में नहीं रहेगा इसके चलते गाँव ढाणियों में सभी ओर पक्के मकान बन रहे है। जो हमारे पुराने घर कच्ची मिट्टी से बने हुए होते थे वो हमें प्रकृति के नजदीक रखते थे। वो अब देखने को कम मिलते है। घरों में शौचालय निर्माण की योजना से सड़को पर गन्दे पानी की समस्या बढ़ गई है। पानी की निकासी को लेकर पड़ौसी आये दिन झगड़ते रहते है जिससे सामाजिक पर्यावरण खराब हो रहा है। ग्राम पंचायतों के पास इतना बजट नहीं होता है कि वो सभी गाँवों की साफ सफाई करवा सके। आदमी की 'अपना देखूँ''अपना करूँ' की भावना के कारण वो अपनों से और प्रकृति से दूर चला गया है। भौतिक सुख तो उसे मिल रहा है परन्तु मानसिक और आत्मिक सुख नहीं। मानव स्वयं ने इतना पर्यावरण खराब कर लिया है कि वह प्रकृति से दूर, सामाजिक[4] पर्यावरण से दूर समूह में होता हुआ भी अकेला है। जिसके सिर पर न तो पेड़ों की छाँव है और न ही अपनों का प्यार है, साथ है तो भौतिक चीजों का जो शारीरिक सुख तो दे सकती है, मानसिक और आत्मिक सुख नहीं।

पर्यावरण संकट से निजात पाने का प्रयास सिर्फ पंचायत राज संस्थाओं के जिम्में छोड़ने से काम नहीं चलेगा। यह समस्या विश्व व्यापी और प्रत्येक व्यक्ति के जीवन से जुड़ी होने के कारण सभी के सामूहिक प्रयास की आवश्यकता है। हमारी धारणा 'वसुधैव कुटुम्बकम' और 'सब भूमि गोपाल की' पर आधारित है। इसलिए प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है– वृक्षारोपण करे, जनसंख्या वृद्धि को रोके प्लास्टिक का पयोग बन्द करे। पर्यावरण संरक्षण के लिए गाँव में एक समिति का गठन हो, जिसमें सरपंच, गाँव का पटेल, ग्राम सेवक, स्कूल का प्रिंसिपल, वनपाल और पाँच अन्य लोग शामिल हो, जिनका कार्य वनों की कटाई को रोकना, जलप्रवाह से भूमि का कटाव रोकना, गाँव का समन्वित विकास एवं पर्यावरण संरक्षण हो। पंचायत के माध्यम से ग्राम सभा का आयोजन हो, जिसमें वनों की महत्ता, आवश्यकता की जानकारी आम आदमी तक पहुँचायी जाय। ग्राम पंचायतों को लोगो के आपसी–झगड़ों का निपटारा तत्काल कर सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र को मजबूत करना चाहिए। हमारी धारणा कि सरकार तथा बड़ी

RRIJM 2015, All Rights Reserved

कम्पनियों को पर्यावरण संरक्षण के लिए कुछ करना चाहिए? यह सत्य नहीं है, प्रत्येक व्यक्ति पर्यावरण प्रदूषण, अवशेषों, कचरा तथा जनसंख्या वृद्धि से रक्षा करने में स्वयं सक्षम है। हम सबको 'गो ग्रीन' के सिद्धान्त का पालन करते हुए तीन आवश्यक बातों को ध्यान में रखना होगा, कम उपयोग पुनरावृत्ति, तथा पुनः उपयोग करना। व्यक्ति को बिजली, पानी तथा कीटनाशक का प्रयोग कम करना होगा, धुम्रपान, जर्दा, तम्बाकू का सेवन छोड़ना होगा तथा वाहनों से निकलने वाले धुआँ से निजात पानी होगी तभी हम 3R–रिसाइकल, री ड्यूस और री–यूज़ की थियरी के अनुरूप काँच, कागज, प्लास्टिक, धातु, खाली जार, शराब की बौतलें, टूटा चश्मा तथा काँच से बनी अन्य वस्तुओं का प्रयोग पुनः करना चाहिए। ग्लोबल वॉर्मिंग को रोकने के लिए वृक्षारोपण, तथा फैक्ट्रियों से निकले धुआँ, प्रदूषण को रोकना आवश्यक है।

भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत सर्प पूजा, पशु पूजा, वनस्पति पूजा को भले ही रूढ़िवाद की संज्ञा दी जाय किन्तु इसमें तो एक प्राकृतिक जीवन शैली की झाँकी परिलक्षित होती है। प्रकृति पूजा बहुदेववाद नहीं है यह पर्यावरण सुरक्षा का रक्षा कवच है जिसमें हमें पृथ्वी के सभी तत्वों के साथ अभियोजन एवं समन्वय की शिक्षा दी जाती है। पर्यावरण संरक्षण को मजबूत और निरन्तर गतिमान बनाये रखने के लिए पंचायत राज संस्थाओं को आर्थिक और प्रशासनिक दृष्टि से और मजबूत करने की आवश्यकता है और लोगों को अपनी जीवन शैली बदल कर प्रकृति के साथ तादात्मय स्थापित करना होगा। नये जीवन–दर्शन का विन्यास निर्माण, भोग विलास, वैभव वीभत्व के बदले–संयमित, नियमित जीवन शैली को अपनाते हुए जागरूक और सचेत रहने की सदैव आवश्यकता है।

सन्दर्भ :–

[1]. गुर्जर, राजकुमार, जाट, बी.सी : मानव एवं पर्यावरण, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2005, पृ. 01
[2]. दुबे, एम.पी. एवं ज्योतिमासिंह :विकास एवं पर्यावरण का अन्तर्द्वन्द्वः एक परिप्रेक्ष्य, ज्ञानविमर्श, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा, वर्ष 1, अंक 1, जनवरी 2009, (मई 2009 में प्रकाशित), पृ. 18
[3]. सिंह, रामजी : गाँधी और भावी विश्व–व्यवस्था, कॉमनवेल्थ पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2019, पृ. 22
[4]. हुसैन, माजिद : पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी, ऐसेस पब्लिशिंग इण्डिया प्रा. लि., नई दिल्ली, 2015, पृ. 18
[5]. सिंह, कटार : ग्रामीण विकास सिद्धान्त, नीतियाँ एवं प्रबन्ध, सेज, नई दिल्ली, 2011, पृ. 6
[6]. जोशी, आर.पी, मंगलानी, रूपा : पंचायती राज के नवीन आयाम, यूनिवर्सिटी बुक हाउस, जयपुर, 2007, पृ. 30
[7]. दवे, दया : वेदों में पर्यावरण, सुरभि पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2000, पृ. 21
[8]. जैन, प्रेम सुमन : पर्यावरण सन्तुलन एवं शाकाहार, संघी प्रकाशन, जयपुर, 1995, पृ. 51
[9]. उपर्युक्त, पृ. 54

RRIJM 2015, All Rights Reserved